April 2016 IJRSS Volume 6, Issue 4 ISSN: 2249-2496

अम्बेडकर की दृष्टि में दलितों की सत्ता में भागीदारी

संजय कुमार सहनी
नेट, शोधार्थी
स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
ल0 ना0 मि0 विश्वविद्यालय,
कामेश्वरनगर, दरभंगा

20 नवंबर, 1930 को लंदन गोलमेज सम्मेलन की पांचवीं बैठक में 'दलित वर्गो' के लिए राजनीतिक सत्ता में भागीदारी की आवश्यकता पर अम्बेडकर ने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा : ''मैं इस सभा में संवैधानिक सुधारों के प्रश्न पर उन दलित वर्गो का पक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिनका मुझे और मेरे सहयोगी राव बहादुर श्रीनिवासन को प्रतिनिधित्व करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यह ब्रिटिश भारत की 430 लाख जनता अथवा 1/5 जनसंख्या का पक्ष है। दलित वर्ग स्वयं में ऐसे लोगों का समूह है, जो मुसलमानों से भिन्न एवं अलग हैं। यद्यपि उन्हें हिन्दू कहा जाता है, किन्तु वे हिन्दू जाति का किसी भी अर्थ में अविभाज्य अंग नहीं हैं। वे न केवल उनसे अलग रहते हैं, अपितु उन्हें जो दर्जा प्राप्त है, वह भी भारत में अन्य जातियों के दर्जे से बिल्कुल भिन्न है। भारत में अनेक जातियां अत्यंत दयनीय एवं गुलामी की स्थिति में रह रही हैं, किन्तु दलित वर्गो की स्थिति बिल्कुल भिन्न हैं। अंतर केवल इतना है कि कृषि कर्मियों और नौकरों के साथ छुआछूत का बर्ताव नहीं किया जाता, जबकि दलित वर्ग छुआछूत के अभिशाप के शिकार हैं। उससे भी खराब बात यह है कि छुआछूत के कारण उन पर लादी गई गुलामी से न केवल सार्वजनिक जीवन के लिए आवश्यक नागरिक अधिकारों से भी वंचित रखा जाता है। मुझे विश्वास है कि इतने बड़े वर्ग, जिसकी जनसंख्या इंग्लैंड अथवा फ्रांस की जनसंख्या के बराबर है और जो अपने अस्तित्त्व के लिए संघर्ष करने के लिए भी संक्षम नहीं है, के दृष्टिकोण को हृदयंगम करने से ही राजनीतिक समस्या का सही समाधान संभव होगा। मैं चाहता हूँ कि इस दृष्टिकोण से यह अधिवेशन प्रारंभ से ही अवगत हो जाएं।''[1]

''दलित वर्गो के पक्ष को यथासंभव संक्षेप में रखने का प्रयास किया जा रहा है। भारत मे नौकरशाह प्रणाली को बदलकर एक ऐसी सरकार स्थापित की जाए जो जनता की हो, जनता द्वारा चलाई जाए और जनता के लिए हो। विश्वास है कि दलित वर्गो के इस पक्ष पर कुछ हलकों में लोगों को विस्मय होगा। दलित वर्ग और ब्रिटिश एक असाधारण बंधन में बंधे हुए हैं। दलित वर्गों ने अंग्रेजों का रूढ़िवादी हिंदुओं के सदियों पुराने जुल्मों और अत्याचारों से मुक्ति दिलाने वालों के रूप में स्वागत किया था। उन्होंने हिंदुओं, मुसलमानों और सिक्खों के वरूद्ध युद्धों में लड़कर अंग्रेजों को भारत का यह विशाल साम्राज्य जीत कर दिय था, जिसके लिए उन्होंने दलित वर्गो के संरक्षक की भूमिका ग्रहण की थी। दोनों में इस प्रकार के घनिष्ठ संबंधों को दृष्टिगत रखते हुए भारत में अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति दलित वर्गो के विचारों में इस प्रकार का परिवर्तन निस्संदेह एक अत्यंत अद्भूत एवं महत्त्वपूर्ण घटना है। इस परिवर्तन के कारणों को जानने के लिए दूर नहीं जाना होगा। हमने यह निर्णय इसलिए नहीं लिया कि हम बहुसंख्यकों जाति के साथ अपना भाग्य आजमाना चाहते हैं, जैसा कि आप जानते हैं कि बहुसंख्कों और दलित वर्गों में कोई मधुर संबंध नहीं है, हमने यह निर्णय स्वतंत्र रूप से लिया है। अपनी परिस्थितियों को ध्यान में रखकर हमने वर्तमान सरकार का मूल्यांकन किया है और देखा है कि इसमें एक अच्छी सरकार के आवश्यक आधारभूत तत्त्वों का भी अभाव है। जब अंग्रेजी शासन से पहले की

अपनी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति से अपनी वर्तमान स्थिति की तुलना करते हैं तो देखते हैं कि आगे बढ़ने के बजाय हम वहीं के वहीं खड़े हैं। अंग्रेजी शासन से पहले अस्पृश्यता के अभिशाप के कारण हम घृणास्पद जीवन व्यतीत कर रहे थे। अंग्रेजी शासन ने अस्पृश्यता को दूर करने के लिए कोई कदम उठाया है? अंग्रेजी शासन से पहले मंदिरों में हमारा प्रवेश वर्जित था। क्या अब हम मंदिरों में प्रवेश कर सकते है? अंग्रेजी शासन से पहले हमें पुलिस में नौकरी नहीं दी जाती थी। क्या अब हम पुलिस में जा सकते है? अंग्रेजी शासन से पहले हम सेना में भर्ती नहीं हो सकते थे। क्या सरकार ने हमारे लिए यह रास्ता खोला? इन प्रश्नों में किसी प्रश्न का उत्तर 'हां' में नहीं है। हम पर अंग्रेजी शासन का लंबे अरसे तक काफी प्रभाव रहा है। उन्होंने हमारा जो भी भला किया, हम उसे स्वीकार करते हैं। किंतु हमारी स्थिति में निश्चय ही कोई मूलभूत अंतर नहीं आया है। ब्रिटिश सरकार ने, वस्तुतः जहां तक हमारा संबंध है, सामाजिक व्यसस्थाओं को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया और विश्वासपूर्वक उन्हें इस चीनी दर्जी की भांति सुरक्षित रखा जिसे पुराने कोट के नमूने पर जब नया कोट सिलने दिया गया, तो उसमें गर्व से पैबंद, खौंच आदि सभी लगा दिए गए। अंग्रेजी शासन के 150 वर्ष बीत जाने पर भी हमारी तकलीफें उन खुले घावों की तरह हैं, जिन पर मरहम लगाने का कोई प्रयास नहीं किया गया।''[2]

''अम्बेडकर का आरोप यह नहीं है कि अंग्रेजी शासन ने हमारी उपेक्षा की है अथवा उनकी हमारे प्रति सहानुभूति नहीं है। हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि वह हमारी समस्याओं का समाधान कर ही नहीं सकते हैं। यदि उन्होंने हमारी उपेक्षा की होती तो बात इतनी गंभीर थी और उसके कारण हमारे विचारों में इतना गंभीर परिवर्तन नहीं आता। स्थिति का गहन विश्लेषण कर हम यह जान गए हैं कि यह केवल उपेक्षा का मामला नहीं है, बल्कि इस कार्य को करने के लिए उनमें बिल्कुल भी काबलियत नहीं है। दलित वर्गों ने देखा है कि भारत में अंग्रेजी सरकार के सामने दो बड़ी गंभीर सीमाएं है। पहली आंतरिक सीमा है, जो सत्तारूढ़ लोगों के चरित्र, उद्देश्य और हितों के द्वारा पैदा हुई हैं बात यह नहीं है कि ऐसा करना उनके चरित्र, उद्देश्य और हितों के विरूद्ध है। बाहरी विरोध के भय से भी वह हमारी सहायता नहीं कर रहे हैं। भारत सरकार उन सामाजिक बुराइयों को दूर करने की आवश्यकता को समझती है, जो भारतीय समाज को घुन की तरह खाए जा रही है जिसके कारण दलित वर्ग अनेक वर्षों से अभिशप्त जीवन जीने को विवश हैं। भारत सरकार जानती है कि जमींदार जनता का खून चूस रहे हैं और पूंजीपति कामगारों को जीवनयापन के लिए उचित मजदूरी नहीं दे रहे हैं तथा उनके लिए काम की बेहतर स्थिति भी पैदा नहीं किया। इसका कारण क्या है? क्या इन बुराइयों को दूर करने के लिए उसके पास कानूनी शक्ति का अभाव है? नहीं, यह बात नहीं है। इसका कारण यह है कि उन्हें भय है कि वर्तमान सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन करने से उसका विरोध होगा। ऐसी सरकार जनता के लिए किस काम की है? इन दो सीमाओं के पाटों में फंसी सरकार दलित वर्गों की स्थिति में सुधार करने और उनके जीवन को बेहतर बनाने के लिए कुछ नहीं कर सकती। हमें ऐसी सरकार चाहिए जिसमें सत्ता में बैठे व्यक्ति देश के हित में अविभाजित राज्यनिष्ठा प्रदान करेंगे। हमें ऐसी सरकार चाहिए जिसमें सत्ता में बैठे व्यक्ति इस बात को समझते हों कि कब सरकार की आज्ञाकारिता समाप्त हो जाती है और प्रतिरोध आरंभ हो जाता है, फिर वे न्याय और समय की आवश्यकताओं को देखते हुए सामाजिक और आर्थिक जीवन की आचार संहिताओं में परिवर्तन करने में नहीं हिचकिचाएं। अंग्रेजी सरकार यह भूमिका कभी नहीं निभा सकेगी। यह कार्य केवल वही सरकार कर सकती है जो जनता की सरकार हो, जो जनता के लिए हो तथा जनता द्वारा चुनी गई हो।''[3]

''दलित वर्गों की ओर से उठाए कुछ प्रश्न हैं और उनकी दृष्टि में उन प्रश्नों के ये उत्तर हैं। इसलिए दलित वर्ग इस अनिवार्य निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि भारत की नौकरशाह सरकार के सदाशय के बावजूद हमारी तकलीफों को दूर करने के लिए किसी प्रकार का परिर्वतन नहीं ला सकती। हम महसूस करते हैं कि हमारे अतिरिक्त हमारे दुख–दर्द को कोई भी दूर नहीं कर सकता और जब तक राजनीतिक शक्ति हमारे हाथों में नहीं आती, हम भी उसे दूर नहीं कर सकते। जब तक अंग्रेजी सरकार बनी रहेगी, तब तक इस राजनीतिक सत्ता का अंश मात्र भी हमें मिलने वाला नहीं। स्वराज्य के अंतर्गत ही हमें राजनीतिक सत्ता में साझेदारी का कोई अवसर मिल सकता है, राजनीतिक सत्ता के बिना हमारे लोगों का उद्धार संभव नहीं है।''

''अम्बेडकर कहते है कि– महोदय, मैं एक बात की ओर आपका विशेष ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। मैंने दलित वर्गो का पक्ष पस्तुत समय 'डोमिनियन स्टेटस' शब्दावली का इस्तेमाल का इस्तेमाल नहीं किया। मैंने इस शब्दावली का इस्तेमाल नहीं किया, इसलिए नहीं कि मैं उसका अभिप्रायः नहीं समझता और न ही इसका यह अर्थ है कि दलित वर्ग डोमिनियन स्टेटस भारत को दिए जाने के विरोधी है। इस शब्दावली का इस्तेमाल न करने के पीछे मेरा मुख्य उद्देश्य यह है कि दलित वर्ग क्या चाहते हैं, इससे उसका संप्रेषण नहीं हो पाता। दलित वर्ग भारत के लिए सुरक्षोपायों सहित डोमिनियन स्टेटस चाहते हैं, किंतु इस प्रशन पर वे बल देना चाहते हैं कि डोमिनियन भारत का कैसे संचालन किया जाएगा? राजनीतिक सत्ता का केंद्र कहां होगा? यह सत्ता किसके हाथों में होगी? क्या दलित वर्ग उसके वारिस होंगे? उनके लिए यह विचारणीय प्रश्न है। दलित वर्ग यह अनुभव करते हैं कि जब तक नए संविधान की निर्मात्री राजनैतिक मशीनरी विशिष्ट प्रकार की नहीं होगी, दलित वर्गों की राजनीतिक सत्ता में रत्ती भर भी साझेदारी नहीं होगी। नए संविधान का निर्माण करते समय भारत की सामाजिक व्यवस्था के कुछ ठोस तथ्यों को ध्यान में अवश्य रखा जाना चाहिए। इस बात को मानकर चलना होगा कि यहां की सामाजिक व्यवस्था उच्च वर्ग के लिए आदर और निम्न वर्ग के लिए घृणा की अन्याय–परक मान्यताओं पर आधारित है। इसलिए वर्ग और जाति पर आधारित इस व्यवस्था में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली के लिए आवश्यक समता और बंधुत्व की मानवीय भावनाओं के विकास की कोई संभावना नहीं है। इस बात को भी मानना होगा कि यद्यपि बुद्धिजीवी भारतीय समाज का एक महत्त्वपूर्ण अंग है किंतु यह सभी उच्च वर्ग से आते हैं, यद्यपि यह देश–हित की बात करते हैं और राजनीतिक आंदोलनों का नेतृत्व करते हैं, किंतु वे जातिगत संकीर्णताओं का परित्याग नहीं कर पाते। दूसरे शब्दों में, दलित वर्ग यह चाहते हैं कि राजनीतिक तंत्र ऐसा हो, जो समाज के मनोविज्ञान के अनुकूल हो। अन्यथा आप एक ऐसे संविधान का निर्माण करेंगे, जो चाहे कितना ही संतुलित क्यों न हो, वह एक विकृत संविधान होगा और जिस समाज के लिए उसे बनाया जाएगा, उसके लिए उपयुक्त नहीं होगा।''[4]

''इस विषय पर अपनी बात समाप्त करने से पहले मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। हमें बार–बार याद दिलाया जाता है कि दलित वर्गों की समस्या एक सामाजिक समस्या है और उसका समाधान राजनीति में नहीं हैं। हम इस विचार का जोरदार विरोध करते हैं। यह महसूस करते हैं कि जब तक दलित वर्गों के हाथ में राजनीतिक सत्ता नहीं आती, उनकी समस्या का समाधान नहीं हो सकता। यह सत्य है और हमारे विचार में इसके अलावा और कुछ सत्य हो ही नही सकता कि दलित वर्गों की समस्या मुख्य रूप से एक राजनीतिक समस्या है और उसे ऐसा ही माना जाना चाहिए। हम जानते है कि राजनीतिक सत्ता अंग्रेजों के हाथ से निकल कर ऐसे लोगों के हाथों में जा रही है जिनका

हमारे जीवन पर अत्यधिक आर्थिक, समाजिक और धार्मिक प्रभुत्व है। हम चाहते है कि सत्ता का हस्तांतरण हो, चाहे स्वराज्य का विचार अतीत में हम पर किए जुल्म, अत्याचार और अन्याय की याद दिलाते है और हो सकता है कि स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात हमें पुनः उन जुल्मों और अत्याचारों का शिकार होना पड़े। हम इस आशा पर यह यह खतरा भी उठाने के लिए तैयार हैं कि अपने देशवासियों के साथ–साथ हमें भी राजनीतिक सत्ता में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलेगा। उसे हम एक ही शर्त पर स्वीकार करेंगे कि हमारी समस्याओं के समाधान में विलंब नहीं किया जाएगा, क्योंकि हमने किसी चमत्कार के होने की पहले ही लंबी प्रतीक्षा की है। जब–जब अंग्रेजी सरकार ने सरकार में और प्रतिनिधित्व देने के लिए कदम उठाए हैं, हर बार दलित वर्गों को जान बूझकर छोड़कर छोड़ दिया गया हैं, राजनीतिक सत्ता में उनके दावे पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया गया। इस बात का पुरजोर विरोध करता हूँ और अब हम उसे और सहन नहीं करेंगे। सामान्य राजनीतिक समझौते के साथ ही हमारी समस्या का समाधान किया जाना चाहिए और उसे भावी शासकों की सहानुभूति और सद्भावना की बातों पर नहीं छोड़ा जाना चाहिए। दलित वर्ग इस बात पर क्यों जोर दे रहे हैं, इसके स्पष्ट कारण हैं।''

''यह सर्वविदित है कि जिस व्यक्ति के पास सत्ता होती है, वह उस व्यक्ति ही अपेक्षा अधिक ताकतवर होता है, जिसके पास यह नहीं होती। हम सभी तैयार नहीं होते, जो सत्ता के बाहर होते हैं। अतः हमें आशा नहीं है कि हमारी सामाजिक समस्या का समाधान होगा। आज हम जिन्हें सत्ता और सम्मान के सिंहासन पर आरूढ़ करने के लिए सहायता कर रहे हैं, उन्हें हटाने के लिए हमें एक और क्रांति करनी होगी, तभी सत्ता हमारे हाथों में आ सकेगी। अपनी सुरक्षा के लिए अत्यधिक विश्वास कर बरबाद हो जाने क बदले अपनी दुश्चिंताओं और आशंकाओं के कारण हमसे कोई घृणा करे, हम इसे अधिक पसंद नहीं करेंगे। इस बात पर बल देना उचित है कि हमारी समस्या के समाधान के लिए एक ऐसा अनुकूल राजनीति तंत्र हो, जिससे हमारा भी उस पर कुछ अधिकार हो। हम उनकी इच्छा पर निर्भर नहीं कर सकते, जो उस तंत्र पर अपना निरंकुश अधिकार जताने के लिए जोड़–तोड़ कर रहे हैं।

दलित वर्ग अपनी सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए किस प्रकार का राजनैतिक तंत्र चाहते हैं, इसके बारे में मैं अधिवेशन को उचित समय पर बताऊंगा। इस समय मैं बस इतना कहना चाहता हूँ कि यद्यपि हम एक जिम्मेदार सरकार चाहते हैं, किंतु हम ऐसी सरकार नहीं चाहते, जिसमें केवल शासक बदल जाएं। यदि कार्यपालिका को उत्तरदायित्व पूर्ण बनाना है तो विधायिका को वस्तुतः पूरी तरह एक प्रतिनिधि संस्था बनाया जाना होगा।''[5]

''अध्यक्ष महोदय, खेद है कि मुझे अपनी बात इतने स्पष्ट शब्दों में कहनी पड़ी है। इसका कोई और विकल्प नहीं था। दलित वर्गों का कोई मित्र नहीं हैं सरकार ने अपना अस्तित्त्व बनाए रखने के लिए अभी तक उनका इस्तेमाल किया है हिंदू उन पर अपना दावा उनको अधिकारों से वंचित करने अथवा यों कहना चाहिए उनके अधिकारों को हड़पने के लिए करते हैं। मुसलमान उनके पृथक अस्तित्त्व को इसलिए मान्यता नहीं देते, क्योंकि उनको भय है कि एक प्रतिद्वंद्वी को शामिल करने से उनके अधिकार कम हो जाएंगे। सरकार द्वारा दबाए, हिंदुओं द्वारा सताए और मुसलमानों द्वारा उपेक्षित दलित वर्ग बिल्कुल ऐसी निस्सहाय एवं दयनीय स्थिति में है, जिसकी कोई मिसाल नहीं है और इसकी ओर मुझे आपका ध्यान आकर्षित करना पड़ा।

एक अन्य प्रश्न के बारे में मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि इस विषय को एक सामान्य बहस के साथ जोड़ दिया गया है। यह प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण है कि इस पर बहस के लिए एक

सत्र की आवश्यकता है। सरसरी उल्लेख से इस विषय के साथ न्याय नहीं हो सकता। यह ऐसा विषय है, जिसमें दलित वर्गों की बाहरी रूचि है और वे इसे एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण विषय मानते हैं। अल्पसंख्यकों के सुरक्षोपायों के रूप मे हम चाहते है कि बहुसंख्यकों के कुशासन से अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए केंद्र सरकार को प्रांतीय बहुसंख्यकों पर प्रभावी अंकुश लगाना चाहिए। भारतीय होने के नाते भारतीय राष्ट्रवाद में मेरी गहरी रूचि है, मैं यह स्पष्ट तौर पर कह देना चाहता हूं कि एकात्मक शासन प्रणाली में मेरा अटूट विश्वास है और इसमें किसी प्रकार के विघ्न की बात मुझे विचलित कर देती है। भारतीय राष्ट्र के निर्माण में एकात्मक शासन प्रणाली की जबरदस्त भूमिका रही है। एकीकरण की प्रक्रिया जो एकीकृत शासन प्रणाली के कारण आरंभ हुई, अभी तक पूरी नहीं हुई है और निर्माण काल में और इस प्रक्रिया के पूरी होने से पहले इस शक्तिशाली प्रणाली को समाप्त करना अनुचित होगा।

तथापि, जिस रूप में इस प्रश्न को प्रस्तुत किया गया है, उसका मात्र एक सैद्धंतिक महत्त्व है और यदि वह सिद्ध कर दिया जाए कि स्थानीय स्वायत्तता एकात्मक शासन प्रणाली के प्रतिकूल नहीं है, तो मै संघीय शासन प्रणाली पर विचार करने के लिए तैयार हूँ।''[6]

''महोदय, दलित वर्गों के प्रतिनिधि के रूप में उनकी ओर से मुझे जो कहना था, मैने कह दिया है। भारतीय होने के नाते मै आपकी अनुमति से एक–दो शब्दों में यह बताना चाहता हूँ कि हम किस स्थिति में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इस संबंध में इतनी बातें कही गई हैं कि उसकी गंभीरता के संबंध मे मैं आगे कुछ नहीं कहना चाहता, यद्यपि इस आंदोलन का मूक दर्शक नहीं हूँ। इस संबंध में यह जानना चाहता हूँ कि क्या हम समस्या के समाधान के लिए सही दिशा में जा रहे हैं? उसका समाधान केवल इस पर निर्भर करेगा कि ब्रिटिश प्रतिनिधित्व मंडल के सदस्य क्या रूख अपनाते हैं। उनसे केवल यही कहना चाहूंगा कि यह उन्हें तय करना है कि समस्या का समाधान समझौते से करना है अथवा बल प्रयोग से, क्योंकि यह केवल उन्हीं की जिम्मेदारी है। जो बल प्रयोग करना चाहते हैं और जिन्हें विश्वास है कि इससे स्थिति सुधरेगी, उन्हें राजनीतिक दर्शन के महान् विद्वान एडमंड बर्क के स्मरणीय शब्दों की याद दिलाना चाहता हूँ, जब अंग्रेजी राष्ट्र अमरीकी उपनिवेशों की समस्या का सामना कर रहा था, तो उन्होंने कहा था :

> 'बल प्रयोग से समस्या का स्थायी समाधान संभव नहीं होता है, यह नीति थोड़ी देर के लिए तो सफल हो सकती है, किंतु इससे पुनः दमन की जरूरत समाप्त नहीं होती। जिस रष्ट्र को बार–बार जीतना पड़े उस पर शासन नहीं किया जा सकता। दमन से अनिश्चय की स्थिति समाप्त नहीं होती। दमन से हमेशा आतंक पैदा नहीं होता और शास्त्र और सेना से विजय नहीं होती। यदि आप सफल नहीं होते, तो कोई विकल्प शेष नहीं रहता। समझौते की कोई आशा नहीं बचती। सत्ता और प्राधिकार कभी–कभी दयालुता दिखाकर प्राप्त किए जा सकते हैं, किंतु उन्हें निरूपाय और पराजित हिंसा द्वारा भिक्षा के रूप में कभी प्राप्त नहीं किया जा सकता। शक्ति के बल पर समस्या के समाधान के विरूद्ध यह भी आपत्ति है कि उससे जिस चीज को सुरक्षित करने के प्रयास किए जाते हैं, वह विकृत हो जाती है। जनता की वफादारी को जितने के लिए लड़ाई की जाती है। वह प्राप्त नहीं होती अपितु हाथ लगती है निंदा, अवज्ञा, विनाश।'

सभी जानते हैं कि यह कितनी मूल्यवान अच्छी सलाह थी। लेकिन इस सलाह को माना नहीं और इसके लिए अमरीका महाद्वीप से हाथ पड़ा। जब इसे माना, तो भला हुआ। शेष डोमीनियन आपके साथ हैं। जो लोग समझौते की नीति अपनाना चाहते हैं, उनसे एक बात कहना चाहता हूं। एक ऐसी धारणा बन गई है कि प्रतिनिधि मंडलों के सदस्यों को यहां डोमीनियन स्टेटस के पक्ष और विपक्ष में बोलने के लिए आमंत्रित किया गया है और जिस पक्ष का पलड़ा भारी रहेगा, 'डोमीनियन स्टेटस' देना उस पर निर्भर करेगा। जो लोग तर्क–वितर्क के लिए तैयार हो रहे हैं, उनसे पूरे आदर के साथ निवेदन करना चाहता हूँ कि इस विषय पर तर्क के सूत्र के आधार पर निर्णय करने से बड़ी और कोई भूल नहीं हो सकती। मेरा तर्क और तार्किकों के साथ कोई झगड़ा नहीं है, किंतु उन्हें चेतावनी देना चाहता हूँ कि यदि वे अपने निष्कर्षों के लिए सही तर्कों का चयन नहीं करेंगे, तो निश्यच ही उसके विनाशकारी परिणाम होंगे। मुझे भय है कि इस बात को पूरी तरह से महसूस नहीं किया जा रहा कि देश की वर्तमान मानसिकता को देखते हुए ऐसा कोई संविधान सफल नहीं होगा, जो अधिकांश जनता को मान्य न हो। वह दिन चले गए जब आप जैसा भी निर्णय लेते थे, भारत उसे मान लेता था। अब वह समय कभी वापस नहीं आएगा। यदि आप चाहते है कि आपका क्या संविधान मान्य हो तो आप उसे तर्क पर नहीं, जनता की सहमति के आधार पर बनाएं।''[7]

संदर्भ सूची :–

1. डॉ0 अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय्, खं0 5, पृ0– 15
2. डॉ0 अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय्, खं0 5, पृ0– 16
3. डॉ0 अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय्, खं0 5, पृ0– 16–17
4. डॉ0 अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय्, खं0 5, पृ0– 18
5. डॉ0 अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय्, खं0 5, पृ0– 18–19
6. डॉ0 अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय्, खं0 5, पृ0– 19–20
7. डॉ0 अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय्, खं0 5, पृ0– 20–21 [गोलमेज सम्मेलन (पूर्ण अधिवेशन) की कार्यवाही – पांचवीं बैठक 20 नवंबर, 1930 कलकत्ता, भारत सरकार केन्द्रीय प्रकाशन शाखा, 1931 पृ0– 123–29] (डॉ0 अम्बेडकर संपूर्ण वाड्मय : खंड 5 से उद्घृत पृ0– 15–21)